सीखने में गति की स्वतंत्रता

❑ रविकान्त तोषनीवाल

बच्चों के सीखने में गति की स्वतंत्रता की अवधारणा का उद्‌गम इस विचार से है कि हर बच्चे की सीखने की क्षमता भिन्न होती है । एक शैक्षिक विचार कई अनुवर्ती अवधारणाओं को जन्म देता है और ये अवधारणाएं शिक्षण-विधि को प्रभावित करती हैं । सीखने में गति की स्वतंत्रता को बच्चों के बीच मान्यता देने के जो निहितार्थ हैं, उनका इस लेख में विवेचन किया गया है। सीखने में बच्चों की गति की भिन्नता से विभिन्न स्तरभेद सामने आते हैं, लेकिन इन स्तरभेदों के चलते भी सैद्धांतिक समझ के आधार पर चीजों को एक भिन्न किन्तु विशिष्ट तरीके से संयोजित किया जा सकता है । इस समस्त उपक्रम में शिक्षक की एक नयी भूमिका उभरती है और साथ ही बच्चों के साथ शिक्षक के संबंधों का एक नया आयाम सामने आता है ।

भूमिका

आज के समय में प्राथमिक शिक्षा में गुणात्मक सुधार के लिये कई छोटे और कुछ बड़े कार्यक्रम चल रहे हैं । चूंकि ये कार्यक्रम गुणात्मक सुधार हेतु चलाये जा रहे हैं, अत: शिक्षा से जुड़ी कई नई मान्यताओं का प्रचलन भी बढ़ रहा है । जैसे - सीखने में आनंद, सतत मूल्यांकन, सीखने की गति की स्वतंत्रता, आदि । सुधार के दौर में कई बार नई मान्यताएं मात्र इसलिये स्वीकार कर ली जाती हैं कि वे नई हैं, भले ही वे उपयोगी व उपयुक्त हों या न हों । अत: इन मान्यताओं के अर्थ और प्रभाव को सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक रूप से समझने की आवश्यकता है।

प्रस्तुत आलेख उपर्युक्त मान्यताओं में से एक ''सीखने में गति की स्वतंत्रता'' पर केन्द्रित है । इसमें सर्वप्रथम सीखने की गति की स्वतंत्रता का अर्थ और आवश्यकता स्पष्ट करने की कोशिश की गई है ।

सीखने में गति की स्वतंत्रता को सिद्धांत रूप में स्वीकार करते ही सीखने की व्यवस्था एवं शाला व्यवस्था से जुड़ी बहुत सी बातें प्रभावित होने या बदलने लगती हैं। अत: शाला के विभिन्न पहलुओं पर इस सिद्धांत की स्वीकृति से पड़ने वाले प्रभावों की विवेचना की गई है ।

अर्थ

हर बच्चे/व्यक्ति की सीखने की गति अलग–अलग होती है। और हर बच्चा भय व दवाब रहित माहौल में किये जा रहे काम की प्रकृति के साथ खुद का तालमेल बिठाकर उस काम को सीखने की अपनी सहज गति स्वयं ढूंढ़ सकता है । काम की प्रकृति के साथ खुद का तालमेल हर बच्चे का अलग-अलग अंदाज में होता है और स्वयं का बनाया तालमेल बच्चे को उस काम से जोड़े रखने में मदद भी कर सकता है ।

यहां यह भी माना जा रहा है कि सीखने की क्षमता तो हर बच्चे/व्यक्ति में होती है और हर बच्चा सीखने में अपनी सभी इन्द्रियों (ज्ञानेन्द्रियों व कर्मेन्द्रियों) और मस्तिष्क का उपयोग करता है लेकिन हर बच्चे की क्षमताएं और रुचियां अलग अलग होती हैं। विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक परिस्थितियों के संदर्भ में हर बच्चे के अनुभव और अनुभवों के आधार पर निरन्तर बनती समझ भी अलग-अलग होती है । बच्चे के अनुभवों एवं समझ को सांझा करने की प्रक्रिया भी साथ–साथ चलती रहती है। इसी प्रकार अलग अलग बच्चों की भावनात्मक स्थितियों में भी आमतौर पर अन्तर होता है । इन चीजों और ऐसी ही कई और चीजों के चलते हर बच्चे/व्यक्ति की सीखने की गति अलग-अलग होती है । साथ ही किसी एक बच्चे/व्यक्ति की सीखने की गति हमेशा एक सी नहीं रहती, इसमें भी उतार चढ़ाव आते रहते हैं। यानि कभी यह तेज हो सकती है तो कभी धीमी भी पड़ सकती है और कभी ऐसा भी हो सकता है कि सीखना हो ही नहीं रहा हो। मौटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि सीखने की गति को किसी शिक्षण बिन्दु पर अधिकार करने में लगाये गये समय के व्युत्क्रमानुपात मे देखा जा सकता है । लेकिन यह गति किसी एक विषय वस्तु के लिए सभी व्यक्तियों के लिए एक समान तय की जा सके, यह संभव नहीं है ।

अत: यह कहा जा सकता है कि हर बच्चे की सीखने की गति, सीखी जा रही विषयवस्तु, और स्वयं की क्षमताओं (शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक) पर निर्भर होने के कारण अलग-अलग होती है ।

कई बार सीखने में गति की स्वतंत्रता का अर्थ लिया जाता है कि चूंकि सभी को सीखने में गति की स्वतंत्रता है, अत: एक बच्चा गिनना एक साल में भी सीख सकता है दो साल में भी या तीन साल में भी । और यदि न सीख पाये तो यह कहा जाता है कि उसको तो गति की स्वतंत्रता है, धीरे-धीरे सीख लेगा । यहां यह स्पष्ट करना जरूरी है कि सीखने में गति की स्वतंत्रता की बात, शिक्षक द्वारा सीखने-सिखाने की तमाम आवश्यक व्यवस्थाओं को उपलब्ध करवाने के संदर्भ में की जा रही है । शिक्षक द्वारा जिम्मेदारीपूर्ण तरीके से बनाई गई सीखने की परिस्थितियों में बच्चा स्वयं अपनी सीखने की सहज गति को ढूंढ़ कर अपने अंदाज में सीखे, इसकी बात की जा रही है । न कि सीखने में गति की स्वतंत्रता की आड़ लेकर अपनी जिम्मेदारी से बचने की ।

आवश्यकता

सीखने में गति के बारे में एक मान्यता यह है कि एक ही आयु वर्ग के बच्चों की सीखने की क्षमता और सीखने में गति लगभग समान होती है । अत: लगभग हमउम्र बच्चों को एक साथ रखकर एक ही कक्षा में प्रवेश दिया जाता है । उनके लिए एकसा पाठ्यक्रम और पुस्तकें तय की जाती हैं । साथ ही उस पाठ्यक्रम और पुस्तकों को पूरा का पूरा सीखने का निश्चित समय एक साल भी तय किया जाता है । एक साल में तयशुदा पाठ्यक्रम व पुस्तकों को सीख लेने वाले बच्चों को सफल और न सीख पाने वाले बच्चों को असफल माना जाता है । और आम तौर पर बच्चों की किसी कक्षा में असफलता के कारण कक्षा की बुनावट व ढांचे, पाठ्यक्रम व पाठ्यपुस्तकों और शाला के माहौल में ढूंढ़ने के बजाय बच्चे की क्षमताओं में कमी या उसके प्रयासों अथवा मेहनत में कमी के रूप में माना जाता है । परिणामस्वरूप बच्चे दूसरा, तीसरा प्रयास शाला के विद्यमान ढांचे में ही करते हैं और अन्तत: प्राथमिक शिक्षा के पहले पांच वर्षों में आधे से अधिक बच्चे शाला से बाहर हो जाते हैं । यहां यह बात भी कही जा सकती है कि बच्चों के शाला त्यागी होने के और भी कारण हो सकते हैं जो कि सही भी है।

यहां सिर्फ यह कहने की कोशिश की जा रही है कि बच्चों को शाला से बाहर करने वाले कई महत्त्वपूर्ण कारणों में से एक कारण सीखने में गति की एकरूपता वाला सिद्धांत भी हो सकता है। अत: हिन्दुस्तान के हर बच्चे के लिए शिक्षा को उपलब्ध करवाने के प्रयासों में लगने से पहले वर्तमान संदर्भों में विद्यमान शिक्षा के स्वरूप व उसके उद्देश्यों और शिक्षायी व्यवस्था को खुली आंखों से समझने की जरूरत है । और सीखने में गति का मामला इस संपूर्ण परिदृश्य के केन्द्रीय मुद्दों में से एक है ।

अत: यदि सीखने में गति की एकरूपता के स्थान पर हम सीखने में गति की स्वतंत्रता को शैक्षणिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण एवं स्वीकार्य समझते हैं तो हमें शाला व्यवस्था और सीखने की व्यवस्थाओं के साथ इस सिद्धांत के संबंधों और इनके आपसी प्रभावों की गहराई से छानबीन करने और इसे जमीन पर उतारने के लिये आवश्यक व्यवस्थाओं व क्षमताओं का स्वरूप गढ़ने की जरूरत है । अन्यथा पूरी संभावना है कि यह सिद्धांत भी महज नारों या शाब्दिक जुमलेबाजी तक सिमट कर धीरे-धीरे अपना अर्थ खो बैठे।

सीखने में गति की स्वतंत्रता के प्रभाव

''सीखने में गति की स्वतंत्रता'' को सिद्धांत रूप में स्वीकार करते ही शाला व्यवस्था और सीखने की व्यवस्था से जुड़ी बहुत सी बातों का स्वरूप बदलने लगता है । यह बदलाव बहुत ही व्यापक स्तर पर होता है और कमोबेश शाला से जुड़े हर पहलू को प्रभावित करता है । अत: इस सिद्धांत की स्वीकृति के साथ ही शाला वैसी कभी नहीं रह सकती, जैसी अब तक आमतौर पर रहती आयी है। आगे शाला के विभिन्न पहलुओं पर इस सिद्धांत से पड़ने वाले प्रभावों की विवेचना करने का प्रयास किया गया है ।

विवेचना के दौरान शाला के विविध पक्षों पर सीखने में गति की स्वतंत्रता के सीधे सीधे प्रभाव देखने की कोशिश की गई है । लेकिन इसका यह मतलब कतई नहीं है कि शाला के वे पक्ष किन्हीं और कारणों से प्रभावित नहीं होते ।

सीखने में गति की स्वतंत्रता का सिद्धांत, अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता, की तर्ज पर सिर्फ खुद के बलबूते पर शिक्षा और शाला की गुणवत्ता नहीं बढ़ा सकता । अत: जरूरी जगहों पर, इसके साथ संगत और समरस हो सकें ऐसी आवश्यक मान्यताओं का जिक्र भी विवेचना के दौरान किया गया है ।

सिखाने के तरीके उर्फ स्तरानुसार शिक्षण

सीखने में गति की स्वतंत्रता के सिद्धांत का सबसे अधिक एवं गहरा प्रभाव सिखाने या पढ़ाने-लिखाने के तरीकों पर पड़ेगा । यह स्वीकार करते ही कि सभी बच्चे अपनी अपनी गति से सीखते हुए आगे बढ़ते हैं, इस बात से नजर चुराना असंभव सा हो जाता है कि कुछ ही समय में सभी बच्चे सीखने के संबंध में किये जा रहे कामों को अलग अलग मात्रा में कर चुके होंगे (यदि वे सभी काम मापे जा सकें)। इसके साथ यदि हम सीखने से संबंधित एक और महत्त्वपूर्ण मान्यता को लें कि किसी भी नयी चीज को बेहतर तरीके से सीखने के लिए जरूरी है कि पहले से सीखी हुई चीजों से इसका संबंध जोड़ते हुए सीखा जाये । और इस मान्यता को सीखने में गति

की स्वतंत्रता के साथ रख कर देखें तो सहज नतीजा यह निकलता है कि हर बार जब बच्चे सीखना आरंभ करेंगे तब सभी बच्चे अलग अलग जगह से शुरू करेंगे । अत: सभी बच्चों के लिए ऐसे कामों को ढूंढने की जरूरत पड़ेगी जिनमें बच्चे अपनी अपनी सीखी हुई पुरानी चीजों को काम में लेते हुए नई चीज सीख सकें। यानि बहुत सारे मौके ऐसे आयेंगे कि कक्षा के हर बच्चे के लिए अलग अलग काम की जरूरत पड़ेगी ।

इसी के साथ बहुत बार ऐसी संभावनाएं भी बन सकती हैं कि कुछ बच्चे मिलकर एक समूह बना लें, कुछ मिलकर दूसरा समूह और इसी तरह तीसरा समूह, चौथा समूह इत्यादि बना लें । और ऐसे काम ढूंढे जा सकें कि हर समूह के सभी बच्चे पहले से सीखी हुई चीजों से जोड़ते हुए वह काम कर सकें या नई चीज सीख सकें।

यहां यह बात ध्यान देने की है कि ये समूह बच्चों की क्षमताओं एवं उनके द्वारा सीखी गई चीजों के आधार पर निरन्तर बनते बिगड़ते रहेंगे । अलग-अलग समय पर विभिन्न समूहों में काम करते हुए बच्चों के धीरे धीरे सीखने में गति और कितना व क्या सीखा के आधार पर अलग अलग स्तर बनने लगेंगे । और इन स्तरों के आधार पर उनके लिये सीखने की व्यवस्थाएं बनानी पड़ेंगी ।

इस बात को समझने के लिए एक उदाहरण लेते हैं । मान लीजिये कि आप 20 बच्चों को पहले दिन में अन्य कामों के साथ साथ 25 तक गिनना सिखाना चाहते हैं । बच्चों की उम्र लगभग 5 साल की है । वैसे तो 25 तक ठीक से गिनना सीखने का मतलब चीजों को 25 तक गिन पाने, बतायी गई संख्या के बराबर चीजें ढेरी से उठा पाने, संख्याओं को क्रम से बोल पाने और किसी संख्या से एक कम और एक ज्यादा वाली संख्या बता पाने से होता है । परन्तु यहां एक कालांश के लिए उद्देश्य को सीमित करके यह मान लेते हैं कि कालांश के अन्त में बच्चे चीजें गिन कर 25 तक की संख्याएं क्रम से और बिना क्रम से ठीक ठीक बता पाए ।

उस कालांश में यदि शिक्षक बच्चों के साथ 25 तक गिनना सिखाने का काम करे तो एक संभावना यह बनती है कि कालांश के अन्त में 8 बच्चे लगभग 20 तक गिनना, 7 बच्चे 15 तक और बाकी 5 बच्चे 10 तक गिनना सीख पायें । चूंकि सभी बच्चों की क्षमताएं तथा गति अलग अलग होती है । अत: ऐसी या इससे मिलती-जुलती कोई दूसरी स्थिति बनाने की संभावना बनती है । लेकिन इस बात की संभावनाएं बहुत कम है कि सभी बच्चे 25 तक गिन कर बता पायें ।

इस स्थिति में आगे के लिये दो रास्ते हो सकते हैं। पहले रास्ते में यदि हम एक समय में पूरी कक्षा को एक ही काम करवाने के आधार पर आगे चलते हैं तो एक तरीका यह हो सकता है कि 20 बच्चों की कक्षा में 25 तक गिनना सीखने का काम तब तक करवाया जाये जब तक सभी बच्चे ठीक से सीख न लें । और इस काम में चाहे दो कालांश लगें, चाहे तीन, चार, पांच कालांश । लेकिन इसमें एक बड़ी दिक्कत यह है जो बच्चे करवाया जा रहा काम सीख चुके हैं, उनको उसी काम को बार बार करने में रुचि कम हो जायेगी । क्योकि बच्चों को उस काम में सीखने के लिए कोई चुनौती नहीं मिल रही । जिन बच्चों की रुचि करवाये जा रहे काम में नहीं होगी, वे कुछ और काम करना शुरू करेंगे । इससे कक्षा में अव्यवस्था उत्पन्न हो सकती है । और उस अव्यवस्था को दूर करने के लिए शिक्षक को भय और दण्ड का उपयोग करना पड़ सकता है । ताकि बच्चे अव्यवस्था न करके ऊबाऊपन के बावजूद शिक्षक द्वारा करवाया जा रहा काम करते रहें ।

इसी रास्ते में एक दूसरा तरीका यह हो सकता है कि एक दो कालांश में यह काम किया जाये, जितने बच्चे सीख जायें, ठीक है । बाकी बच्चे खुद मेहनत करके सीखते रहेंगे । इस रास्ते की भी एक समस्या यह है कि यह तरीका भी शाला में किये जाने वाले सभी कामों में दोहराया जायेगा और कुछ बच्चे धीरे धीरे किये जा रहे काम को एक दो बार में ठीक से न सीख पाने के कारण कमजोर होते जायेंगे और अन्तत: शाला से बाहर हो जायेंगे ।

दूसरा रास्ता यह हो सकता है कि जो बच्चे जितना सीखे हैं उसे पक्का करते हुए उससे आगे की चीज सीखें । यानि दूसरे दिन बच्चे कुछ इस तरह काम कर सकते हैं । 7 बच्चों का एक समूह 20 से 25 तक गिनना और बताई गई संख्या के बराबर चीजें ढेर में से उठाकर दे पाना सीखें। बाकी 13 बच्चों का दूसरा समूह 25 तक गिनना सीखें, इस रास्ते में दूसरे ही दिन बच्चों के सीखने में गति के आधार पर दो स्तर बन रहे हैं। पहले स्तर पर 13 बच्चे और दूसरे स्तर पर 7 बच्चे हैं ।

इसी प्रकार शाला में किये जा रहे कामों में सीखने में गति के आधार पर अलग अलग स्तर बन सकते हैं । यहां इस बात की भी संभावना रहती है कि एक बच्चा भाषायी क्षेत्र में तो पहले स्तर पर हो और गणितीय क्षेत्र में दूसरे या तीसरे स्तर पर । यानि एक बच्चा सभी क्षेत्रों में समान स्तरों पर होगा, यह जरूरी नहीं ।

इस तरह बच्चों के साथ उनके स्तरों के अनुसार या उनके स्तर के उपयुक्त काम करने से उन्हें अपनी सहज स्वाभाविक गति से निरन्तर सीखते रहने में मदद मिलेगी । अत: सीखने में गति में भिन्नता को स्वीकार करते ही बच्चों के स्तरानुसार शिक्षण की व्यवस्था करनी पड़ेगी अर्थात् सीखने की ऐसी व्यवस्थाएं करनी पड़ेंगी जो बच्चों को अपनी सहज गति से सीखने में मददगार हो ।

कक्षा का आकार

किसी कक्षा के बच्चे यदि अपनी अपनी गति से सीखते हुए आगे बढ़ते रहें तो शिक्षक को सभी बच्चों पर अलग-अलग ध्यान देना पड़ेगा । कक्षा में यदि बहुत सारे बच्चे (जैसे 50-60) हों तो शिक्षक को सब बच्चों का ध्यान रखने में बहुत परेशानी आयेगी और शायद उसके लिए बच्चों पर अलग अलग ध्यान देना संभव भी न हो पाये । अत: बच्चों को अपनी गति से सीखने में आगे बढ़ने में मदद करने के दृष्टिकोण से कक्षा का बड़ा आकार बहुत बड़ी रुकावट बन सकता है ।

बहुत से शिक्षाविदों/व्यक्तियों के अनुभव के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ऐसी जिस कक्षा में बच्चों की संख्या 10 से 20 हो उसमें शिक्षक हर बच्चे का पर्याप्त ध्यान रख सकता है और बच्चों को सीखने में गति की स्वतंत्रता का बहुत सारा मौका मिल सकता है । बशर्ते कि उस कक्षा के बच्चों में अपने आप काम करने, समझ कर काम करने, दोस्तों के साथ मिलजुल कर आपसी सहयोग से काम करने और आपसी संवाद या बातचीत के जरिये समझने तथा सीखने की प्रवृत्ति विकसित करने के प्रयास निरन्तर किये जाते रहे हों । अत: इस मत को स्वीकार करते ही कक्षा का आकार सिकुड़ना लाजमी है ।

योजना और अंकन

कक्षा का आकार सिकुड़ने के साथ ही यदि शिक्षक सभी बच्चों पर पर्याप्त ध्यान देना चाहता है, उन्हें अपनी गति से आगे बढ़ने के मौके देना/उपलब्ध करवाना चाहता है तो शिक्षक को हर एक बच्चे की गति का, गति में आ रहे उतार-चढ़ाव या जड़ता या बाधाओं का ठीक ठाक अन्दाजा होना चाहिये । इस ठीक ठाक अन्दाजे के लिये शिक्षक के पास हर दिन, हर एक बच्चे ने क्या सीखा, कितना सीखा और कैसे सीखा, की जानकारी होनी जरूरी है । और इसके लिए हर बच्चे के बारे में अंकन की जरूरत पड़ेगी। अंकन के साथ ही प्रत्येक बच्चे की गति अनुसार उसके लिए काम ढूंढ़ना पड़ेगा। मान लीजिए कि किसी शिक्षक के पास 15-20 बच्चों की कोई कक्षा है और शिक्षक सभी बच्चों को उसकी गति और आवश्यकता के अनुसार कोई काम देना चाहता है । क्या वह बच्चे के साथ काम करते वक्त ही सोचकर इन्हें कोई काम सौंपेगा ? यदि शिक्षक ऐसा करता है तो जब वह किसी एक बच्चे के लिये कोई काम सोच रहा है तब बाकी बच्चे उसका इन्तजार करते रहेंगे। और यदि किसी एक बच्चे के लिए काम सोचने में शिक्षक को कम से कम दो मिनिट भी लगे तो उनचालीसवें मिनट में वो बीसवें बच्चे के पास पहुंच पायेगा । इसी बीच दिये गये काम में से बच्चे कई बार शिक्षक की मदद मांग सकते हैं । यहां कहने की कोशिश यह की जा रही है कि गति की स्वतंत्रता की बात करते ही सीधे कक्षा में जाकर बच्चों को पढ़ाने में कई परेशानियां आ सकती हैं। अत: शिक्षक को बच्चों के साथ काम करने की योजना कक्षा में जाने से पहले बनानी होगी । योजना बनाते समय शिक्षक अलग-अलग बच्चों की गति एवं आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए कुछ बच्चों के लिए सामूहिक काम करने की योजना बना सकता है । और आरंभ में बच्चों को समूह में एवं अलग अलग काम समझा कर काम के दौरान उनकी मदद के लिये भी समय निकाल सकता है। अत: यह कहा जा सकता है कि गति की स्वतंत्रता को बनाये रखने के लिये शिक्षक को नियमित रूप से प्रतिदिन सभी बच्चों का व्यक्तिगत अंकन करने और उसके आधार पर अगले दिन की योजना बनाने की भी जरूरत पड़ेगी ।

योजना बनाने के साथ ही शिक्षक को योजना के अनुसार पूर्व तैयारी भी करनी पड़ेगी। उदाहरण के लिए यदि उसने योजना में किन्हीं तीन बच्चों के लिए दस-दस तीलियों के गट्ठर बांधकर दहाई की अवधारणा सीखने का काम रखा है तो उसे यह भी सुनिश्चित करना पड़ेगा कि गट्ठर के लिए पर्याप्त तीलियां/सींके और उन्हें बांधने के लिए धागा या रबर बैंड उपलब्ध रहें। बगैर पूर्व तैयारी के और आवश्यक सामग्री के बच्चे अपनी गति से आगे नहीं बढ़ पायेंगे । क्योंकि शिक्षक को बारी-बारी से सभी बच्चों के साथ काम करने और सभी बच्चों का ध्यान रखते हुए भी किसी खास समय पर किन्हीं एक-दो-तीन या ज्यादा बच्चों के साथ कुछ देर तक काम करने की जरूरत पड़ेगी । अत: ऐसे समय के लिए बाकी सारे बच्चों के पास ऐसा काम और सामान होना चाहिए जिससे बच्चे खुद कुछ करने या अपने साथी/साथियों की मदद से और शिक्षक की न्यूनतम मदद से काम कर सकें ।

मूल्यांकन के तरीके

योजना व अंकन की आवश्यकता के साथ-साथ सीखने में गति में विविधता का सीधा असर मूल्यांकन के तरीकों पर भी पड़ेगा। आजकल मूल्यांकन को आम तौर पर परीक्षा के नाम से जाना जाता है । वर्तमान में शिक्षा व्यवस्था जिन मुद्दों पर केन्द्रित है उनमें परीक्षा भी एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा है । परीक्षा, चाहे वह तिमाही, छमाही या वार्षिक हो, उत्तीर्ण या अनुत्तीर्ण करना उसके सबसे प्रमुख उद्देश्यों में से एक है । शालाओं की श्रेष्ठता इस बात से आंकी जाती है कि वहां के कितने बच्चों ने परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की है । इस परीक्षा केन्द्रित शिक्षा व्यवस्था के दुष्प्रभावों

से हम भलीभांति परिचित हैं ही, जो कि बुखार, दस्त, अवसाद, नकल करने और कभी कभी आत्महत्या तक कर लेने के रूप में नजर आते रहते हैं । इसका एक मुख्य कारण शायद यह है कि परीक्षा, जिसे शिक्षा व्यवस्था की परिधि पर रखना चाहिये था उसे केन्द्र में खड़ा कर दिया है । अत: परीक्षा में सफलता प्राप्त करना मुख्य उद्देश्य हो गया है और इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये सीखने या लिखने-पढ़ने आदि की जरूरत पड़ती है ।

सीखने में गति की स्वतंत्रता का सिद्धांत स्वीकारते ही सीखना सम्पूर्ण शिक्षा के केन्द्र में खड़ा हो जाता है और बाकी सभी व्यवस्थाएं इस दृष्टिकोण से बनाने की आवश्यकता पड़ती है कि बेहतर सीखना कैसे हो और सीखना निरन्तर जारी कैसे रहे । मूल्यांकन सीखने की बेहतर व्यवस्थाएं करने और सीखना जारी रखने में मदद जरूर कर सकता है । यहां सीखना शिक्षा के मुख्य उद्देश्य के रूप में है और मूल्यांकन उन कई चीजों में से एक चीज है जो सीखने में मदद करती है । तब मूल्यांकन का समय और तरीके सीखने में गति और क्या सीखा के आधार पर बनाने पड़ेंगे, न कि इस आधार पर कि धरती सूरज का चक्कर एक साल में लगाती है, अत: वार्षिक मूल्यांकन किया जाये ।

सभी बच्चों की सीखने में गति अलग अलग होने की वजह से सभी बच्चों का मूल्यांकन एक साथ एक ही तरीके से करना उपयुक्त नहीं रहेगा । अत: हर बच्चे ने अपनी गति से जितना सीखा है उसका मूल्यांकन करना पड़ेगा । यानि सभी का मूल्यांकन अलग-अलग करना पड़ सकता है ।

यदि हम मूल्यांकन को सीखने में मदद करने वाली प्रक्रिया के रूप में मानें तो हर रोज बच्चे के काम के मूल्यांकन की जरूरत पड़ेगी । यदि शिक्षक को यह नहीं पता कि किसी एक दिन बच्चे ने क्या सीखा ? तो बच्चे के स्तरानुसार काम की योजना बनाने में समस्या आयेगी । बच्चे ने थोड़ा बहुत सीखा, अच्छी तरह सीख लिया या बिल्कुल नहीं सीखा, इन तीनों स्थितियों में बच्चे के स्तरानुसार अलग-अलग योजना बनेगी । यह योजना पिछले दिन के अंकन के आधार पर बनेगी । अर्थात् स्तरानुसार शिक्षण को प्रभावी बनाने के लिये नियमित अंकन की जरूरत पड़ेगी जो कि किसी बच्चे ने क्या व कितना सीखा का रिकार्ड, यानि मूल्यांकन ही है ।

अब यदि पूरी बात को एक साथ देखें तो सीखने के संदर्भ में मूल्यांकन अधिक स्पष्ट हो सकता है । सीखने में गति की स्वतंत्रता को स्वीकार करते ही बच्चों के लिये स्तरानुसार शिक्षण की व्यवस्था करनी पड़ेगी और स्तरानुसार शिक्षण में चूंकि प्रत्येक बच्चे की सीखने की स्थिति का पता शिक्षक को होना चाहिये, अत: उसे प्रभावी बनाने के लिए नियमित योजना व अंकन की जरूरत पड़ेगी। यानि अंकन के रूप में मूल्यांकन सीखने की प्रक्रिया को सुचारू रूप से जारी रखने में मददगार की हैसियत लिये नजर आता है ।

इस नियमित और सतत् होने वाले मूल्यांकन का एक उपयोग किसी भी समय बच्चे की प्रगति जानने में भी किया जा सकता है और वह भी परीक्षा के भूत को बगैर खड़ा किये हुए । और बच्चों ने शाला में कितना सीखा इसका सबूत बड़ों को देने के लिए उन्हें परीक्षा की यंत्रणा से नहीं गुजरना पड़ेगा ।

सतत् और नियमित मूल्यांकन का एक और बेहतर उपयोग बच्चे को सीखने में आ रही कठिनाई को पहचान कर ठीक समय पर मदद कर पाने के रूप में भी किया जा सकता है ।

कक्षा का स्वरूप

सिखाने के तरीके, कक्षा के छोटे आकार, नियमित योजना व अंकन और अंकन के रूप में सतत मूल्यांकन के साथ साथ सीखने में गति की स्वतंत्रता का कक्षा के स्वरूप पर भी फर्क पड़ेगा।

अभी कक्षाओं का स्वरूप कुछ इस प्रकार है कि पहले साल किसी निश्चित उम्र में बच्चे को पहली कक्षा में प्रवेश दिया जाता है । और बच्चे से यह अपेक्षा रखी जाती है कि वह साल दर साल, कक्षा-दर-कक्षा तय किया हुआ पाठ्यक्रम (जो कि अधिकांश शिक्षकों के सामने पाठ्य-पुस्तकों के रूप में आता है) सफलता पूर्वक हजम करता हुआ आगे बढ़ता रहे । जिन बच्चों को इससे या अन्य किसी कारणों से बदहजमी हो जाती है, वे बीच में ही शाला से बाहर हो जाते हैं । और हम जानते हैं कि सिर्फ प्राथमिक स्तर की शिक्षा पूरी करते, न करते लगभग आधे से अधिक बच्चे शाला से बाहर हो जाते हैं ।

सीखने में गति की स्वतंत्रता की बात करते ही कक्षा का स्वरूप इस आधार पर तय नहीं हो सकता कि धरती सूरज का एक चक्कर तीन सौ पैंसठ दिन में लगाती है अत: यदि नये बच्चे शाला में आये हैं तो पहले चक्कर में पहली कक्षा में रहेंगे । दूसरे तीसरे चक्कर में दूसरी, तीसरी कक्षा और इसी तरह आगे की कक्षाओं में जायेंगे । जो एक साल में एक कक्षा पार नहीं कर पाते वे कमजोर, कम क्षमता वाले बच्चे हैं । कुछ समय पहले तक प्राथमिक शिक्षा में ऐसे बच्चों को दण्ड स्वरूप फिर से पहली कक्षा में पढ़ना पड़ता था ।

सीखने में गति की विभिन्नता के प्रभावों के रूप में हमने पहले सिखाने के तरीकों में स्तरानुसार शिक्षण एवं नियमित योजना एवं अंकन की बात की है । यदि ये काम व्यवस्थित रूप से चलें तो कुछ

ही महीनों में किसी एक कक्षा के बच्चों के स्तर बहुत अलग-अलग हो जाते हैं । और उस कक्षा के बच्चों के स्तरानुसार विभिन्न समूह बन सकते हैं जो निरन्तर बदलते रह सकते हैं । यदि शाला का स्वरूप ऐसा है कि उसमें एक शिक्षक और बीस बच्चे मात्र हैं तो वहां प्राथमिक शिक्षा के आरंभिक पांच वर्षों तक बगैर कक्षायी विभाजन के बच्चों के साथ काम किया जा सकता है । जहां शिक्षक एक से अधिक हैं और बच्चे भी उसी अनुपात में अधिक हैं, वहां भी एक शिक्षक बीस बच्चों के साथ निरन्तर पांच वर्षों तक काम कर सकता है । और कक्षाओं के इन नकली ढांचों के दबावों से बच्चों को मुक्त रखा जा सकता है ।

समय - सारणी

गति की स्वतंत्रता के साथ शाला की समय-सारणी इतनी दृढ़ नहीं रह पायेगी जितनी अभी तक रहती आयी है । अभी बच्चे शाला में घंटी की आवाज के साथ विषय/काम को आरंभ एवं खत्म करना सीखते हैं । किसी काम का शुरू होना या खत्म होना घंटी की आवाज पर निर्भर करता है जो कि पूर्वनिर्धारित समय-सारणी के अनुसार निश्चित समयान्तराल के बाद बजायी जाती है। और आम तौर पर यह समयान्तराल बच्चों की सीखने की आवश्यकताओं के आधार पर तय न हो कर प्रशासनिक आवश्यकताओं के तहत होता है । सीखने में गति की स्वतंत्रता को स्वीकार करते ही निश्चित समय के कालांशों से लैस समय-सारणी के ढांचें में दरारें पड़नी आरंभ होती हैं। क्योंकि गति की विभिन्नता एवं विविधताओं को स्वीकार करते ही देश, राज्य, शाला और यहां तक कि किसी एक कक्षा के सभी बच्चों के लिये किसी भी एक काम के लिए समय निश्चित करना मुश्किल हो जाता है और तब कालांशों का समय इस आधार पर तय होगा कि कोई बच्चा किसी एक काम को अपनी गति से कितनी देर में पूरा कर पाता है । अर्थात् हर एक बच्चे के लिये किसी एक काम के लिये (यदि वे एक ही काम कर रहे हैं तो) कालांश की लम्बाई अलग अलग होगी जो कि उस बच्चे की सीखने में गति व अन्य कारकों पर निर्भर होगी । दूसरे शब्दों में तयशुदा कालांशों का स्वरूप लचीला बनाना पड़ेगा, जो कि निश्चित मिनिट या घंटे न होकर बच्चों के समूह की शैक्षिक जरूरतों के मद्देनजर तय होगा ।

बैठक - व्यवस्था

कक्षा के आकार को सिकोड़कर, योजना बनाकर व समय सारणी को लचीला बनाने के साथ ही शिक्षक को उस योजना को क्रियान्वित भी करना पड़ेगा । योजना को मूर्तरूप देने के लिये शिक्षक को बच्चों के साथ काम करना पड़ेगा । 15-20 बच्चों के साथ काम करने के लिये कोई न कोई व्यवस्था भी बनानी पड़ेगी। काम करने की व्यवस्था के संबंध में कक्षा में बैठने की व्यवस्था और व्यवस्था बनाने के तरीकों पर गति की स्वतंत्रता के असर के बारे में शिक्षक को निश्चित तौर पर विचार करना पड़ेगा।

गति के वैविध्य को स्वीकारते ही किसी एक बैठक व्यवस्था को हर समय काम में लिये जाने को सही ठहराना बहुत मुश्किल हो जायेगा । वैसे किस समय कौनसी बैठक व्यवस्था उपयुक्त रहेगी, यह तय करने का एक सबसे महत्त्वपूर्ण आधार तो उस समय करवाये जा रहे काम या विषय की प्रकृति होनी चाहिये । इसी के साथ दो महत्त्वपूर्ण आधार यह भी हो सकते हैं कि सीखने वाले बच्चे की उस काम को सीखने में गति कितनी है और अब तक वह कितना सीख चुका है । इन तीनों आधारों को लेते ही कक्षा का दृश्य वैसा नहीं रह सकता जैसा कि अब तक रहता आया है। यानि कि शिक्षक या शिक्षक की कुर्सी के सामने बैठे बच्चों का समूह जो कि शिक्षक के डंडे, पढ़ने की किताब के साथ साथ बैठने की कतारबद्ध व्यवस्था के अन्तर्निहित गुणों से भी नियन्त्रित होता है । कक्षा के आकार पर विचार करते समय यह बात की गई थी कि 15-20 बच्चों की कक्षा में शिक्षक 50-60 बच्चों की कक्षा की तुलना में हर बच्चे पर अधिक ध्यान तो दे सकता है, फिर भी किसी भी शिक्षक के लिए हर समय हर बच्चे का पूरी तरह ध्यान रख पाना संभव नही हैं । जब 20 बच्चों की कक्षा में जब सभी बच्चे अलग-अलग गति से और अलग-अलग काम कर रहे हों, तब हर बच्चे पर हर समय ध्यान देना फिर से कठिन हो जाता है। अत: शिक्षक बच्चों के साथ काम करने की योजनाएं कुछ इस प्रकार बनाये कि बच्चे बहुत सा काम अपने आप और शिक्षक की कम से कम मदद से करना सीखें। चूंकि अपने आप काम करने में बहुत बार कठिनाई आ सकती है। उस समय हो सकता है बच्चे को शिक्षक की सख्त जरूरत हो और शिक्षक किसी अन्य बच्चे/बच्चों के साथ व्यस्त हो । ऐसे समय में वे बच्चे अपने दोस्तों की मदद लेकर अपनी कठिनाई हल कर सकते है। क्योंकि कक्षा में सभी बच्चों की गति अलग अलग होगी। अत: बहुत संभावना बनती है कि ऐसी कठिनाई पहले किसी बच्चे के आ चुकी हो या उस कठिनाई से जुड़ा काम कोई बच्चा पहले कर चुका हो। अत: सीखने में गति की स्वतंत्रता को बनाये रखने के लिये कक्षा में ऐसा माहौल बनाने की जरूरत पड़ेगी जिसमें बच्चे एक दूसरे की मदद कर सकें । बजाय एक दूसरे को पछाड़ने की कोशिश के ।

अब जब हम कक्षा के भीतर ऐसे माहौल की बात कर रहे हैं जिसमें बच्चे अपने आप काम करते रहें यानि स्वावलम्बी शिक्षार्थी

के रूप में कार्य करें और एक दूसरे की मदद करते हुए आपसी सहयोग से सीखें, तो फिर कक्षा ऐसी नहीं रह पायेगी कि उसमें सुई-पटक सन्नाटा छाया रहे । क्योंकि एक दूसरे की मदद करने के लिए बच्चों को आपस में बातचीत तो करनी ही पड़ेगी । अत: कक्षा में बच्चों की आपसी बातचीत, जो खुसरपुसर या फुसफुसाहट से शुरू होकर जोरदार तकरीर में बदल सकती है, के प्रति शिक्षक को खुद के नजरिये पर पुनर्विचार करना पड़ेगा और शिक्षण की एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण विधा, बच्चों की आपसी बातचीत या संवाद, जिसे न जाने कितने अरसे से अनुशासन भंग के नाम पर कक्षा और शाला से बाहर कर रखा है, जिसे शाला में मात्र आधी छुट्टी के समय में जकड़ रखा है, उसे कक्षा में लाना पड़ेगा और बच्चों का अपनी गति से सीखना बदस्तूर जारी रहे, इसके लिये संवाद के लोकतांत्रिक तरीकों को विकसित करने के लिए निरन्तर प्रयास करने की जरूरत पड़ेगी ।

स्वावलंबी शिक्षार्थी के रूप में विकसित हो रहे बच्चों के क्रियाकलापों से भरपूर और उनके आपसी संवाद या बातचीत के दौरान अभिव्यक्त होती ऊर्जा से सराबोर कक्षा में कई बार बच्चों को एक दूसरे के पास जाने की जरूरत पड़ेगी। कई बार उन्हें सभी से अलग होकर अकेले अपने काम में मग्न हो सकने की भी जरूरत पड़ेगी, तो कई बार अपने कुछ दोस्तों के साथ मिलकर कुछ करने की जरूरत पड़ेगी ।

इसी तरह शिक्षक को भी हर बच्चे पर ध्यान देने और उसके पास जाने या जरूरत पड़ने पर किसी बच्चे या बच्चों की मदद करने की जरूरत पड़ेगी । इन आवश्यकताओं के चलते शिक्षकाभिमुख कतारबद्ध बच्चों की बैठक व्यवस्था उपयुक्त नहीं रह पायेगी, बल्कि कई बार यह कक्षा का माहौल जीवन्त बनाने में बाधा भी डाल सकती है ।

शिक्षकाभिमुख कतारबद्ध बैठक व्यवस्था की अनुपयुक्तता के साथ ही शिक्षक को अन्य व्यवस्थाएं तलाशनी पड़ेंगी । यदि किये जा रहे काम की प्रकृति और बच्चे की शारीरिक मानसिक एवं भावनात्मक स्थिति को आधार मानें तो इन दोनों में सन्तुलन के आधार पर अलग अलग बैठक व्यवस्थाएं अपने आप एक स्वरूप ग्रहण करने लगती हैं। उदाहरण के लिये यदि शिक्षक बच्चों के साथ मौखिक भाषाई क्षमताओं के विकास के लिये बोलने और भाषा के उपयोग के खूब सारे मौके उपलब्ध करवाना चाहे, या कहानी सुनाना चाहे या आपसी संवाद के लिए अवसर सृजित करना चाहे; तो बैठक व्यवस्था एक प्रकार की होगी । ऐसे ही अन्य सामूहिक कार्यों में सभी बच्चों एवं शिक्षकों को एक साथ मिलकर काम करने की जरूरत पड़ेगी । यदि इसमें शिक्षकाभिमुख कतारबद्ध बच्चों की बैठक व्यवस्था काम में लेते हैं तो शिक्षक का ध्यान एवं सीधा सम्पर्क तो सभी बच्चों के साथ रहेगा लेकिन बच्चों का सीधा सम्पर्क मात्र अपने अड़ोस-पड़ोस में बैठे बच्चों से ही रह पायेगा। यह व्यवस्था शिक्षक को बच्चों पर नियन्त्रण करने के अप्रत्यक्ष अधिकार प्रदान कर देती है । अत: कक्षा के सभी बच्चों की भागीदारी बराबरी के स्तर पर सुनिश्चित करने के लिये गोल घेरे में बैठने की व्यवस्था अधिक उपयुक्त रहेगी ।

इसी प्रकार बैठक व्यवस्था का एक और उदाहरण लें । मान लें, किसी एक कक्षा में गणित की योजना इस प्रकार है कि बच्चे किताब पर अपने आप काम करेंगे , 5 बच्चे कंकरों की मदद से 9 तक जोड़ करेंगे (शुरू में शिक्षक उन्हें समझायेगा, बाद में वे अपने आप करते रहेंगे) और 8 बच्चों को शिक्षक कंकर या सूखी मींगणियों की मदद से गिनती सिखायेगा । इस योजना के अनुसार काम हो तो अपने आप किताब पर काम करने वाले बच्चे कक्षा के कमरे के अन्दर या बाहर अपनी किसी मनपसंद जगह पर बैठ कर काम में डूब सकते हैं । जोड़ सीखने वाले 5 बच्चे एक छोटा घेरा बना कर या दो छोटे घेरे में बैठ कर जोड़ का काम कर रहे हो सकते हैं और बाकी 8 बच्चे अपने सामने कंकरों की ढेरी रखे गोल घेरे में बैठकर शिक्षक के साथ साथ गिनना सीख रहे हो सकते हैं।

यहां कहने की कोशिश यह की जा रही है कि गति में स्वतंत्रता के स्वीकार के साथ बैठक व्यवस्था, किये जा रहे काम की प्रकृति और बच्चे की जरूरतों के हिसाब से बनने और बदलने लगती है ।

आपसी संबंध और कक्षा का माहौल

सीखने में गति की स्वतंत्रता को स्वीकारते ही अपने आप काम करने की क्षमता, आपसी सहयोग से काम करने की प्रवृति विकसित करने की जरूरत पड़ती है । चूंकि अपने आप काम करने में बच्चों को कई तरह की समस्याएं आ सकती हैं, उनके मन में कई प्रकार के प्रश्न उठ सकते हैं । जिन पर वे अपने दोस्तों या शिक्षक से बेझिझक खुलकर बात करने की जरूरत महसूस कर सकते हैं । अत: आपसी संबंध और कक्षा का माहौल कुछ इस तरह का बनाने की जरूरत पड़ेगी जिसमें बच्चे हर चीज पर सवाल पूछ सकें, आपस में और शिक्षक के साथ बातचीत करके समझने व स्वयं खोजबीन का प्रयास कर सकें । अत: सीखने में गति की स्वतंत्रता को बनाये रखने के लिए आपसी संबंध सहज और दोस्ताना बनाने की जरूरत पड़ेगी।

व्यवस्था बनाने के तरीके

गति की स्वतंत्रता का कक्षा में व्यवस्था बनाने के तरीकों पर भी कुछ प्रभाव पड़ेगा । जब हम सभी बच्चों की सीखने में गति

अलग अलग मानकर सीखने की बात कर रहे हैं तब व्यवस्थाा बनाने के परंपरागत तरीके उसमें रोड़ा अटका सकते हैं। डंडे के जोर से व्यवस्था बनाने या सिखाने का सिद्धांत आमतौर पर शैक्षिक किताबों में अस्वीकृत परन्तु अधिकांश शालाओं में महत्त्वपूर्ण जगह हासिल किये रहता है । डंडे के भय की वजह से तात्कालिक व्यवस्था भले ही बन जाये लेकिन इसमें बच्चों के सीखने की सहज गति में बाधा पड़ती है । डर की हालत में वे अपनी सहज और स्वाभाविक गति से नहीं सीख पाते और कई बार कुछ क्षेत्रों में अरुचि भी उत्पन्न हो जाती है, परिणाम स्वरूप सीखने में गति कम हो जाती है ।

सीखने में गति के साथ साथ अपने आप सीखने और आपसी सहयोग की प्रवृत्ति विकसित करने की संभावना दबावपूर्ण एवं भयमुक्त माहौल में हो पाना मुश्किल रहता है । यदि हो भी जाये तो वह डंडे का डर हटते ही कपूर की तरह उड़ जायेगी ।

इसी तरह अलग अलग गति से सीख रहे बच्चों की आपसी तुलना करना भी उचित नहीं रह पायेगा क्योंकि हर बच्चा अलग-अलग स्तर पर है । और उसकी क्षमताएं व समझ भी अलग अलग स्तर पर हैं, तो उनकी आपसी तुलना एक तरह का दबाव पैदा करेगी । वह दबाव बच्चे की सीखने में गति को अवरुद्ध भी कर सकता है।

अत: सीखने में गति की विवेचना के साथ साथ ऐसे तरीके विकसित करने की जरूरत पड़ेगी जिसमें बच्चे बगैर किसी बाहरी दबाव के, सिर्फ सीखने में निहित आनंद के लिये ही सीखने का प्रयत्न करें और सीखने के लिये आवश्यक प्रेरणा या प्रोत्साहन उन्हें सीखने की प्रक्रिया में ही मिलने लगे ।

शिक्षण-सामग्री का स्वरूप

सीखने में गति की स्वतंत्रता के प्रभाव शिक्षण सामग्री पर भी नजर आयेंगे । भले ही वह किताबें हो या गतिविधियों के लिए आवश्यक सामग्री हो । बच्चे की सहज गति को बनाये रखने और उसे विकसित करने के लिये किताबें कुछ इस तरह की बनानी पड़ेंगी कि वे सरल हों, रोचक हों, और बच्चा खुद की गति से उन किताबों के साथ काम करता हुआ सीख सके । साथ ही किताबें व सामग्री ऐसी बनानी पड़ेंगी कि बच्चे को शिक्षक की मदद कम से कम लेनी पड़े । किताबों की बुनावट कुछ इस प्रकार की रखनी पड़ेगी कि बच्चे को उसमें नित नई चुनौती मिले और वह चुनौतियों से जूझता हुआ, उपलब्धियों के अहसास से भरता हुआ, सीखता रहे।

सीखने की गति की स्वतंत्रता बनाये रखने के लिए स्वयं काम करने की स्वतंत्रता भी एक जरूरी चीज है और स्वतंत्र रूप से अपने आप काम करते समय बहुत सम्हल-सम्हल कर, ठोंक बजा कर अगला कदम रखना अधिक बेहतर होता है । अत: शिक्षण सामग्री ऐसी बनानी पड़ेगी जिसमें कदम कदम पर स्वमूल्यांकन की प्रक्रिया भी शामिल हो ताकि बच्चा निरन्तर स्वयं की सीखी चीज का मूल्यांकन करता हुआ अपने आप सीखता रहे । इसी के साथ शिक्षण सामग्री में आपसी मदद से काम करने की बहुत सी गुंजाइश भी रखनी पड़ेगी ।

शिक्षक की भूमिका

सीखने में गति की स्वतंत्रता के प्रभावों की विवेचना के साथ ही शिक्षक की एक नयी भूमिका उभरने लगती है । वैसे भी जब किसी एक मान्यता के प्रभाव शाला के इतने सारे पहलुओं पर पड़ रहे हों, तब शाला संचालन और मुख्यत: बच्चों को सिखाने के लिये जिम्मेदार व्यक्ति का कार्य एवं भूमिका बदले नहीं यह कैसे हो सकता है ?

शिक्षक को बच्चों के सीखने की प्रक्रिया और उनके व्यवहारों को गहराई एवं संवेदना के साथ समझना पड़ेगा । शिक्षक को बच्चों की सीखने में गति, उन्हें सीखने में आ रही समस्याओं पर कई बार तुरन्त निर्णय लेने पड़ेंगे । हर बच्चे को उसके स्तरानुसार काम मिल पाये, इसके लिये नियमित रूप से अंकन/मूल्यांकन करते हुए अगले दिन की योजना बनानी पड़ेगी ।

शिक्षक की आज्ञानुसार दबाव में एक ही गति से काम करने वाले बच्चों और अपनी अपनी गति से, स्वयं के प्रयासों से काम करने वाले बच्चों के व्यवहार और व्यक्तित्व पर भी फर्क पड़ता है। अत: बच्चे अपनी अपनी गति से सीखते हुए स्वावलम्बी शिक्षार्थी के रूप में विकसित हो सकें, इसके लिये शिक्षक को उनके साथ दोस्ताना एवं बराबरी का व्यवहार करना पड़ेगा ।

शिक्षक को अलग-अलग जगह पर काम कर रहे बच्चों के लिए आवश्यक व्यवस्थाएं करने, सामग्री उपलब्ध करा पाने की भी जरूरत पड़ेगी । बच्चों की सीखने में मदद करने के लिये शिक्षक को प्राथमिक शिक्षाक्रम अच्छी तरह से समझना पड़ेगा ।

यह कहा जा सकता है कि शिक्षक को निरन्तर सजग रहते हुए, किये जा रहे काम की प्रकृति और बच्चों की सीखने की आवश्यकताओं को समझ कर उनके लिए जरूरी व्यवस्थाएं करनी पड़ेगी । ◆